International Journal of Research
Special Issue for UGC Approved Journal-Hindi Papers
Available at https://edupediapublications.org/journals
e-ISSN: 2348-6848
p-ISSN: 2348-795X
Volume 05 Issue 02
January 2018

''सांख्यदर्शन में प्रकृति स्वरूप विमर्श''

डॉ0 बबलू पाल
अतिथि प्रवक्ता
संस्कृत विभाग,
इलाहाबाद विश्वविद्यालय,
इलाहाबाद
babloop1984@gmail.com

भारतीय चिन्तन परम्परा वेदों से आरम्भ होकर ब्राह्मण, आरण्यक, उपनिषद् एवं विभिन्न दार्शनिक सम्प्रदायों के रूप में प्रवाहित होती रही। सर्वप्रथम ऋग्वेद के नासदीय सूक्त में ब्रह्माण्ड के तत्त्वों का दार्शनिक विवेचन हुआ है। कालान्तर में ये ही प्रश्न उपनिषदों एवं विभिन्न दार्शनिक सम्प्रदायों में उपस्थापित किये गये, जिनसे दर्शन जगत् का प्रादुर्भाव हुआ। भारतीय दर्शन मुख्यतः दो भागों में विभक्त है– आस्तिक व नास्तिक। वेदों पर विश्वास करके जिन दर्शनों का विकास हुआ वे आस्तिक या वैदिक दर्शन कहलाये तथा वेदों के कर्मकाण्डीय सिद्धान्तों को अस्वीकार करके जिन दर्शनों का विकास हुआ वे नास्तिक या अवैदिक दर्शन कहलाये। वैदिक या आस्तिक दर्शन के अन्तर्गत षड्दर्शनों–सांख्य–योग, न्याय–वैशेषिक, पूर्वमीमांसा तथा उत्तर–मीमांसा (वेदान्त) की गणना की जाती है तथा नास्तिक या अवैदिक दर्शन के अन्तर्गत –बौद्ध, जैन एवं चार्वाक आते हैं।

वैदिक दर्शनों में सांख्य दर्शन अति प्राचीन तथा महत्त्वपूर्ण दर्शन है जो ब्रह्माण में व्याप्त समस्त तत्त्वों की सूक्ष्म व्याख्या प्रस्तुत करता है। इस दर्शन की प्राचीनता का अनुमान इसके सिद्धान्तों के विविध प्राचीन भारतीय शास्त्रों में उपलब्धता से अवश्य लगाया जा सकता है। श्वेताश्वतर आदि उपनिषदों में सांख्य की चर्चा की गयी है, पुराणों, महाभारत, श्रीमद्भगवद्गीता आदि प्राचीन ग्रंथों में

e-ISSN: 2348-6848
p-ISSN: 2348-795X
Volume 05 Issue 02
January 2018

सांख्य की महत्ता का मुक्त कण्ठ से प्रशंसा की गई है। इसके अतिरिक्त भी कुछ अर्वाचीन साहित्यिक रचनाओं में भी सांख्य दर्शन के सैद्धान्तिक पक्षों का गुणगान किया गया है। विभिन्न दर्शन–सम्प्रदायाओं में ब्रह्माण्ड के तत्त्वों का विवेचन भिन्न–भिन्न रूप में किया गया है तथा इनके संख्या में भी भेद दृष्टिगत होते हैं । शब्दार्थकौस्तुभ शब्दकोश में 'तत्त्व' शब्द का अर्थ दिया गया है– वास्तविक दशा, यथार्थरूप, परमात्मा, यथार्थज्ञान तथा सांख्याभिमत पच्चीस तत्त्व।[1] वाचस्पत्यम् में 'तत्त्व' शब्द का यथार्थ स्वरूप, ब्रह्म, परमात्मा, प्रकृत्यादि प◌ंचविंशतितत्त्व, सत्त्व, रजस् तथा तमस् आदि अर्थों को ग्रहण किया गया है।[2] अतः 'तत्त्व' शब्द का अभिप्राय है ब्रह्माण्ड में व्याप्त वह शक्ति जिससे सृष्टि की रचना होती है तथा उस शक्ति में भी उसको प्रेरित करने वाली शक्ति। संसार में विद्यमान तत्वों जिनसे सृष्टि का आरम्भ होता है तथा उस तत्त्वों में शक्ति का संचार करने वाली शक्ति के मर्म को जानना तथा इन दोनों के बीच में बन्धन में पड़े हुए जीव को मुक्त कराना ही दर्शन का मूल उद्देश्य है।

सांख्यदर्शन में यद्यपि पच्चीस तत्त्वों को स्वीकार किया गया है। उक्त दर्शन के प्रवर्तक कपिल मुनि से लेकर इस दर्शन सम्प्रदाय के परवर्ती आचार्यों ने भी उन्हीं पच्चीस तत्त्वों को कण्ठतः स्वीकार किया है। सांख्यदर्शन के मूल ग्रंथ 'सांख्यसूत्र' के सिद्धान्तों की व्याख्या के लिए सांख्य सम्प्रदाय के प्रमुख आचार्य ईश्वरकृष्ण ने एक 'साख्यकारिका' नामक प्रकरण ग्रंथ की रचना की। यह प्रकरण ग्रंथ सांख्य सम्प्रदाय में इतना प्रसिद्ध हुआ कि सांख्य दर्शन इसी के नाम से कालान्तर में प्रसिद्धि को प्राप्त हुआ। ईश्वरकृष्ण ने अपने उक्त ग्रंथ में सांख्याचार्यों द्वारा स्वीकृत पच्चीस तत्त्वों का उल्लेख निम्न कारिका में किया है–

International Journal of Research
Special Issue for UGC Approved Journal-Hindi Papers
Available at https://edupediapublications.org/journals
e-ISSN: 2348-6848
p-ISSN: 2348-795X
Volume 05 Issue 02
January 2018

मूलप्रकृतिरविकृतिर्महदाद्याः प्रकृतिविकृतयः सप्त।
षोडशकस्तु विकारो न प्रकृतिर्न विकृतिः पुरुषः।।[3]

अर्थात् इन पच्चीस तत्त्वों में प्रकृति तत्त्व मूल तथा अविकृति है, जो प्रकृति तथा विकृति दोनों हैं वे सात हैं, सोलह तत्त्व केवल कार्य हैं। पुरुष न तो प्रकृति है और न ही विकृति। अविकृति तत्त्व – मूलप्रकृति– जो किसी का विकार नहीं है।

- प्रकृति–विकृति– महत् (बुद्धि), अहंकार पञ्चज्ञानेन्द्रियां (रूप, रस, गन्ध, स्पर्श, शब्द)
- केवल विकृति– एकादशेन्द्रियाँ– पञ्चज्ञानेन्द्रियां–क्षोत्र, चक्षु, घ्राण, रसना तथा त्वक, पञ्चकर्मेन्द्रियाँ–वाक, पाद, पाणि, पयु उपस्य) उपयेन्द्रिय–मन अहंकार पञ्चमहाभूत
- न प्रकृति न विकृति – पुरुष

इनके आविर्भाव क्रम को कारिकाकार ने निम्न कारिका में दर्शाया है–

प्रकृतेरर्महांस्ततोऽहंकाररस्तस्माद्गणश्च षोडशकः।
तस्मादपि षोडशकात्पञ्चभ्यः पञ्चभूतानि।।[4]

अर्थात् प्रकृति से महत् (बुद्धि), महत् से अहंकार, अहंकार से सोलह तत्त्वों का समूह तथा उन सोलह तत्त्वों में पञ्चतन्मात्राओं से पञ्चमहाभूत आविर्भूत होते हैं। सांख्य दर्शन में यही भौतिक सृष्टि है।

अतः उक्त विवेचन से यह स्पष्ट है कि सांख्य में कण्ठतः पचीस तत्त्वों को स्वीकार किया गया है, किन्तु इन पचीस तत्त्वों में दो ही तत्त्व–प्रकृति एवं पुरुष प्रमुख हैं क्योंकि प्रकृति एवं पुरुष के संयोग से ही सृष्टि बतलाई गई है–

पुरुषस्य दर्शनार्थं कैवल्यार्थं तथा प्रधानस्य।

e-ISSN: 2348-6848
p-ISSN: 2348-795X
Volume 05 Issue 02
January 2018

पङ्ग्वन्धवदुभयोरपि संयोगस्तत्कृतः सर्गः।।[5]

प्रकृति तत्त्व– कारिकाकार ने प्रकृति को सभी व्यक्त कार्यों का मूल स्वीकार किया है– मूलप्रकृतिरविकृतिः। तत्त्वकौमुदीकार आचार्य वाचस्पति मिश्र ने प्रकृति का लक्षण करते हुए कहा है–

'मूलप्रकृतिरविकृतिः। प्रकरोतीति प्रकृतिः प्रधानम्,

सत्त्वरजस्तमसां साम्यावस्था, सा अविकृतिः प्रकृतिरेवेत्यर्थः।[6]

सांख्यतत्त्वप्रदीपिका में प्रकृति स्वरूप का लक्षण करते हुए कहा गया है–

प्रकृतिरेव, प्रधानमित्यभिधीयते सत्त्वादि त्रिगुणा नित्येति प्रकृतिस्वरूपलक्षणाम्।[7]

उक्त ग्रंथ में ही प्रकृति का तटस्थ लक्षण करते हुए कहा गया है–

तटस्थ लक्षणं तु जगदुपादानकारणं प्रकृतिरिति।[8]

इस प्रकार सांख्यदर्शन में प्रकृति को अव्यक्त, मूलकारण व सत्त्व, रजस तथा तमस् गुणों की साम्यावस्था के रूप में बतलाया गया है।

<u>प्रकृति के अस्तित्त्व की सिद्धि–</u>

सांख्यदर्शन में प्रकृति को सूक्ष्म एवं एक विभुतत्त्व के रूप में स्वीकार किया गया है। जब कोई वस्तु सूक्ष्म है तो उसकी विद्यमानता को कैसे स्वीकार किया जाये, यह तत्त्व जिज्ञासुओं में एक दृढ़ प्रश्न विद्यमान रहता है, जो स्वाभाविक भी है। इसीलिए सांख्यदर्शन में प्रकृति के अस्तित्व की सिद्धि के लिए सांख्याचार्यों ने अनेक सुदृढ़ तर्क भी उपस्थापित किया है। प्रकृति की सूक्ष्मता के सन्दर्भ में ईश्वरकृष्ण ने अपनी कारिका में कहा है–

सौक्ष्म्यात्तदनुपलब्धिर्नाऽभावात् कार्यतस्तदुपलब्धेः।

International Journal of Research
Special Issue for UGC Approved Journal-Hindi Papers
Available at https://edupediapublications.org/journals
e-ISSN: 2348-6848
p-ISSN: 2348-795X
Volume 05 Issue 02
January 2018

महदादि तच्च कार्यं प्रकृतिसरूपं विरूपं च।।[9]

अर्थात् सूक्ष्म होने के कारण उस प्रकृति का प्रत्यक्ष नहीं होता न कि अभाव के कारण। उनके कार्यों से उनकी विद्यमानता का अनुमान होता है। महत् (बुद्धि) आदि जो उसके कार्य हैं, वे प्रकृति के समान भी हैं और विपरीत भी। प्रकृति के समान हैं यह कहने का अभिप्राय यह है कि महत् आदि भी प्रकृति की तरह कारण हैं, अतः इस दृष्टि से प्रकृति के सदृश हैं और प्रकृति के कार्य होने से प्रकृति के विपरीत भी हैं क्योंकि प्रकृति तो केवल कारण है न कि महत् आदि की भाँति कारण और कार्य दोनों है।

प्रकृति के अस्तित्त्व की सिद्धि में कारिकाकार ने दो कारिकाएं उद्धृत की है–

भेदानां परिमाणात्समन्वयाच्छक्तिः प्रवृत्तेश्च।
कारणकार्यविभागादविभागाद्वैश्वरूधस्य।।[10]
कारणमस्त्यव्यक्तं प्रवर्तते त्रिगुणतः समुदयाच्च।
परिणामतः सलिलवत् प्रतिप्रतिगुणाश्रयविशेषात्।।[11]

उपर्युक्त कारिका के माध्यम से प्रकृति के अस्तित्व की सिद्धि की तार्किक व्याख्या प्रस्तुत की जा सकती है–

भेदानां परिमाणात्– अर्थात– महत् आदि भेदों (कार्यों) के परिमित (अष्मापक) होने से। उक्त कारिका में भेदानां की व्याख्या करते हुए तत्त्वकौमुदीकार ने कहा है–

''भेदानां विशेषाणां महदादीनां भूम्यन्तानां कार्याणां कारणं मूलकारणमस्त्यव्यक्तम्''[12]

अर्थात् महत् से लेकर पञ्चमहाभूत पर्यन्त भेदों (कार्यों) का कारण अव्यक्त ही है। युक्तिदीपिकाकार ने इसकी व्याख्या करते हुए कहा है–

International Journal of Research
Special Issue for UGC Approved Journal-Hindi Papers
Available at https://edupediapublications.org/journals
e-ISSN: 2348-6848
p-ISSN: 2348-795X
Volume 05 Issue 02
January 2018

यत्परिमितं तस्य सत उत्पत्तिर्दृष्टा। तद्यथा– मूलांकुरपर्णनालदण्डवुसतुष–शूक पुष्पक्षीरतण्डुलकणानाम्। परिमिता– महदहंकारेन्द्रियतन्मात्र महाभूतलक्षण भेदाः। तस्मात्सत्कारणपूर्वकाः। यदेषां कारणं तदव्यक्तम्।[13] इसके आगे भी उन्होंने प्रश्नपूर्वक उक्ति दी है– 'कस्मादत्यक्तम्'? असद्भेदानामपि परिमाणदर्शनात।[14]

समन्वयात्– अर्थात्–कारण सदृश होने के कारण प्रकृति अव्यक्त है। समन्वय की व्याख्या वाचस्पति मिश्र ने निम्न प्रकार से की है– भिन्नानां समानरूपता समन्वयः[15] अर्थात् विभिन्न पदार्थों में अनुगत समानभाव। इसको स्पष्ट करते हुए उन्होंने कहा है– सुखदुःखमोहसमन्विता हि बुद्ध्यादयोऽध्यवसायादिलक्षणः प्रतीयन्ते। यानि च तद्रूपमनुगतानि, तानि तत्स्वभावाव्यक्त कारणानि, यथा मृद्धेमपिण्डसमनुगता घटमुकुटादयो मृद्धेमपिण्डा– व्यक्तकारणका इति कारणमस्त्यव्यक्तं भेदानामिति सिद्धम्।[16] अर्थात् निश्चय आदि स्वरूप बुद्धि आदि सुखदुःखमोहात्मक प्रतीत होते हैं। जो वस्तुएँ जिनके समान होती हैं उनका कारण भी उसी स्वभाव वाली अव्यक्त वस्तुएं होती हैं। जैसे– मृत्तिका और स्वर्ण के पिण्ड में समवेत (समनुगत) घट,मुकुट आदि के कारण उनके अव्यक्त रूप मिट्टी और सुवर्ण पिण्ड ही होते हैं। अतः यह सिद्ध ही है कि समस्त कार्यों का कारण अव्यक्त ही होता है।

शक्तितः प्रवृत्तेश्च–अर्थात् जो जिस विषय में समर्थ होता है या जो वस्तु जिस वस्तु के उत्पादन में समर्थ होती है, उसकी प्रवृत्ति उसी के उत्पादन में होती है। प्रकृति के अस्तित्व की सिद्धि के इस हेतु द्वारा कारणतावाद (सत्कार्यवाद) में निर्दिष्ट 'शक्तस्य शक्यकरणात्' युक्ति का उपन्यास किया गया है। जैसे घटादि को उत्पन्न करने वाली शक्तियों के आश्रय मृत्तिका–पिण्ड आदि होते हैं जो उनके कारण कहे जाते हैं। उसी प्रकार महदादि तत्त्वों की उत्पादिका कोई आश्रय तत्त्व

e-ISSN: 2348-6848
p-ISSN: 2348-795X
Volume 05 Issue 02
January 2018

अवश्य होगा, जो महत् आदि का कारण होगा। इस महत् आदि व्यक्त तत्त्वों का आश्रय मूलप्रकृति रूप अव्यक्त ही है।[17]

कारण–कार्य विभागात्– कारण–कार्य का विभाग होने से। अर्थात् कारण और कार्य के पृथक्–पृथक् प्रतीत होने के कारण मूल–प्रकृति अव्यक्त ही है तथा सभी कार्यों का मूल उपादान कारण है।

पृथ्वी आदि कार्य अपने कारण तन्मात्र से आविर्भूत होने के कारण पृथक्–पृथक् प्रतीत होते हैं तथा सत् तन्मात्र अपने कारण अहंकार से, सत अहंकार अपने कारण महत् से तथा सत् महत् तत्त्व परम अव्यक्त प्रकृति से आविर्भूत होने पर पृथक् प्रतीत होते हैं। यही परम अव्यक्त रूप कारण से साक्षात् एवं परम्परा से सम्बद्ध सम्पूर्ण कार्यसमूह का विभाग है।[18]

युक्तिदीपकाकार ने इसकी व्याख्या करते हुए कहा है–

कारणं च कार्यं च कारणकार्ये तयोर्विभागः कार्यकारण विभागः। इदं कारणमिदं कार्यमिति बुद्धया द्विधावस्थापनं विभागो यः स कारणकार्यविभागः। तदवस्थितभावपूर्वकं दृष्टम्। तद्यथा शयनासनरथचरणादिः।[19]

अविभागाद्वैश्वरूप्यस्य– महदादि तत्त्वों का लयस्थान होने से प्रकृति अव्यक्त ही है। अर्थात् पृथ्वी आदि का प्रलयावस्था में अपने कारण तन्मात्राओं में लय हो जाना, तन्मात्राओं का स्वकारण अहंकार में लय होना, अहंकार का स्वकारण महत् में तथा महत् का स्वकारण मूल प्रकृति में लय होना और प्रकृति किसी अन्य का कारण न होने के कारण वह अव्यक्त कारण ही है। अनेक रूप कार्यों का प्रकृति में यही लय अथवा अविभाग है। अर्थात् सभी व्यक्त कार्यों का अव्यक्त कारण में विलीन हो जाना ही अविभाग है।[20]

युक्तिदीपिकाकार ने इसकी व्याख्या निम्न प्रकार से की है–

इहयद्विश्वरूपं .....तस्मादव्यक्तम्[21]। वैश्वरूप की व्याख्या करते हुए युक्तिदीपिकाकार ने कहा है– वैश्वरूप्यमिति अविभागद्वैश्वरूप्यस्येति।[22]

प्रकृति की अस्तित्त्व की सिद्धि करने के पश्चात् ईश्वरकृष्ण ने अग्रिम कारिका में प्रकृति की प्रवृत्ति अर्थात् कार्य का परिणाम के प्रकार को बतलाया है–

प्रवर्तते त्रिगुणतः– यह अव्यक्त तीनों गुणों के रूप में ही परिणत होता है। प्रलयावस्था में सत्त्व, रजस् तथा तमोगुण अपने रूप से परिणत होते हैं, क्योंकि स्वभावतः परिणामी तीनों गुण बिना परिणत हुए एक क्षण भी नहीं रह सकते। इसलिए प्रलयकाल में भी सत्त्व, सत्त्वरूप से, रजस् रसोरूप से तथा तमस् तमोरूप से परिणत होता हे।[23]

समुदयाच्च– अव्यक्त सृष्टि रूप कार्य को बतलाते हुए कारिकाकार कहते हैं– 'समुदयात् प्रवर्तते त्रिगुणतः– अर्थात् यह अव्यक्त तीनों गुणों के सम्मिश्रण से भी कार्य करता रहता है। समुदय की व्युत्पत्ति करते हुए तत्त्वकौमुदीकार ने कहा है– क्षमेत्य उदयः समुदयः।[24] अर्थात् सम्मिश्रित रूप से आविर्भाव।

परिणामतः सलिलवत् प्रतिप्रतिगुणाश्रयविशेषात्[25]

प्रलयकाल में गुणों के एकरूप होते हुए सृष्टिकाल में गुणों के अनेक प्रकार के परिणाम (कार्य) कैसे होने लगते हैं, पूर्वपक्ष की ओर से शंका करते हुए इस मत का समाधान पूर्वक उनका कथन है– 'परिणामतः सलिलवत्' अर्थात् जल की तरह परिणाम होने के कारण। जैसे मेघ से गिरा जल एकरस (एकरूप) होते हुए भी पृथ्वी पर विभिन्न विकारों को प्राप्त करके नारियल, ताड़, करेला, आंवला आदि विभिन्न रस बन जाने से मीठा, खट्टा आदि बन जाता है, उसी प्रकार एक–एक गुण की प्रधानता से आविर्भाव होने से उस प्रधान गुण का आश्रय लेकर गौण गुण

e-ISSN: 2348-6848
p-ISSN: 2348-795X
Volume 05 Issue 02
January 2018

रूप अनेक परिणामों को उत्पन्न करते हैं। इसी को कारिकाकार ने प्रतिप्रतिगुणाश्रयविशेषात्' रूप में कहा है।

व्यक्त तथा अव्यक्त के साधर्म्य तथा वैधर्म्य को बतलाते हुए कारिकाकार ईश्वरकृष्ण ने कहा है–

हेतुमदनित्यमव्यापि सक्रियमनेकमाश्रितं लिङ्ग।
सावयवं परतन्त्रं व्यक्तं विपरीतमव्यक्तम्।।[26]

अर्थात् व्यक्त हेतुमान– अनित्य, अव्यापि, सक्रिय, अनेक, आश्रित (अपने मूलकारण पर आश्रित रहने वाला) लिङ्ग, अवयव से युक्त, तथा परतन्त्र है, अव्यक्त इसके विपरीत है।

व्यक्त तथा अव्यक्त दोनों को सांख्य में त्रिगुणात्मक, अविवकेकी, विषय, सर्वसाधारण, अचेतन तथा उत्पादनधर्मी बतलाया गया है। इसी मत की सिद्धि के लिए कारिकाकार ने अपना मत उद्धृत किया है–

त्रिगुणमविवेकि विषयः सामान्यमचेतनंप्रसवधर्मि।
व्यक्तं तथा प्रधानं तद्विपरीतस्तया च पुमान्।।[27]

इस प्रकार सांख्यदर्शन में प्रकृति को सभी व्यक्त तत्त्वों का मूल उपादान कारण बतलाया गया है, अतः इसे अव्यक्त भी कहा जाता है। सृष्टिकाल में प्रकृति से ही सभी व्यक्त तत्त्व आर्विभूत होते है एवं प्रलयकाल में अपने–अपने कारण में तिरोभूत हो जाते हैं। इस प्रकार प्रकृति एक सूक्ष्म तत्त्व होने के साथ–साथ सृष्टि निर्माण तथा प्रलय का कारण है।

सन्दर्भः–

1. शब्दार्थकौस्तुभ, पृ0 463.

e-ISSN: 2348-6848
p-ISSN: 2348-795X
Volume 05 Issue 02
January 2018

2. वाचस्पत्यम्, पृ0 3210

3. सांख्यकारिका, 3.

4. सांख्यकारिका, 22

5. सांख्यकारिका, 21

6. सांख्यकारिका, 5

7. सांख्यतत्त्वकौमुदी, 3. पृ0 19.

8. सांख्यतत्त्वप्रदीपिका, पृ0 1

9. सांख्यतत्त्वप्रदीपिका, पृ0 1

10. सांख्यकारिका, 8.

11. सांख्यकारिका, 15.

12. सांख्यकारिका, 16

13. सांख्यतत्त्वकौमुदी, 15 पृ0 89.

14. युक्तिदीपिका, 15, पृ0 90.

15. युक्तिदीपिका, 15, पृ0 90.

16. सांख्यतत्त्वकौमुदी, 15 पृ0 91.

17. सांख्यतत्त्वकौमुदी, 15 पृ0 91

18. सांख्यतत्त्वकौमुदी, 15 पृ0 89–90

19. युक्तिदीपिका, 15, पृ0 93.

20. सांख्यतत्त्वकौमुदी, 15 पृ0 90

21. युक्तिदीपिका, 15, पृ0 94–95

22. युक्तिदीपिका, 15, पृ0 94–95

e-ISSN: 2348-6848
p-ISSN: 2348-795X
Volume 05 Issue 02
January 2018

23. सांख्यतत्त्वकौमुदी, पृ0 93

24. सांख्यतत्त्वकौमुदी, पृ0 93

25. सांख्यकारिका, 16

26. सांख्यकारिका, 10

27. सांख्यकारिका, 11

———